कोरोना ने मनुष्य के बहिर्जीवन को बदला है, अंतर्मन को नहीं

जय प्रकाश

कोरोना महामारी यानी कोविड '19 के बाद दुनिया वही नहीं रही जो इस धरती पर उसके आने से पहले थी। उसने मनुष्य को बहुत हद तक बदल दिया है। यह बदलाव मुख्यतः जीवन-शैली, व्यवहार और सामाजिक मनोविज्ञान के स्तर पर हुआ है।

इस समय जब सूचना-तकनीक और जैव प्रौद्योगिकी के प्रयोगॲ की चामत्कारिक सफलता से उत्साहित मनुष्य-जाति समूचे संसार को एक गाँव (ग्लोबल विलेज) में तब्दील कर चुकी है, और स्वयं मनुष्य का कृत्रिम प्रतिरूप (मानव-क्लोन) रचने के क़रीब पहुँच गयी है, और विज्ञान की इन अप्रतिम उपलब्धियॲ के सहारे सर्वशक्तिमान ईश्वर को अपदस्थ कर सकने के अहंकार में चूर हो रही है, सहसा वह एक अदृश्य सूक्ष्म जीव के सामने निढाल पड़ गयी है। विज्ञान को कभी धर्म से चुनौती मिली थी जिसे पार कर उसने विवेक के साम्राज्य की स्थापना की थी जो कालांतर में आधुनिक समाज के रूप में चरितार्थ हुआ। लेकिन आज इसी आधुनिक समाज में विज्ञान के अभूतपूर्व विकास के बावजूद प्रकृति के रहस्य को भेद पाने में उसकी असमर्थता ही एकाएक उसकी चुनौती बन गयी है। सारा संसार कोरोना का टीका ईजाद होने की व्याकुल प्रतीक्षा में है। संभव है, देर-सबेर टीका आ जाए लेकिन तब तक यह अदृश्य जीव, जो सही अर्थों में न प्राणधारी है न निर्जीव, न जाने मानव-जाति को कितना हलाकान करेगा और कितनी बड़ी जनसँख्या की बलि ले चुका होगा।

मानव-इतिहास में महामारी ने कई बार करोड़ॲ लोगॲ की जान ली है। लेकिन तब विज्ञान इतना विकसित नहीं था। इस बार कोरोना महामारी का मुकाबला आधुनिक विज्ञान के अत्यंत उन्नत रूप से है। ज़ाहिर है, विज्ञान का पलड़ा अब तक हल्का साबित हुआ है।

ईश्वर वैक्सीन नहीं बनाता

कोरोना की चुनौती का उत्तर दे पाने में फ़िलहाल सक्षम न हो पाने के बावजूद यह विश्वास क़ायम है कि विज्ञान अंततः उत्तर ढूँढ लेगा। एक तरफ़ विज्ञान के सामर्थ्य पर अगाध विश्वास और दूसरी तरफ़ ईश्वर पर भरोसा – कोरोना-काल में यह अंतर्विरोध ज़्यादा साफ़ तरीक़े से उजागर हुआ है। यह दुचित्तापन मानो आधुनिक मनुष्य के अस्तित्त्व के साथ गुँथा हुआ है। इस सचाई से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि इस दौर में तालाबंदी के बीच धार्मिक स्थल श्रद्धालुविहीन थे और देव-प्रतिमाएँ भी क़ैद रहीं। घर ही अब पूजास्थल था और उसके रहते किसी इतर पूजास्थल की आवश्यकता न होने या समाप्त हो जाने का ख़्याल कभी नहीं आया। इसलिए तालाबंदी में ढील होते ही पूजास्थलॲ में भीड़ उमड़ पड़ी। अंध धार्मिकॲ ने भ्रम फैलाया कि कोरोना धर्मस्थलॲ के पास भी नहीं फटक सकता। कोरोना-काल ने साबित किया कि इस संकट के निवारण में कोई हस्तक्षेप न करने के बावजूद ईश्वर की सत्ता प्रश्नॲ से परे है। विज्ञान तो संकट से निपटने के लिए जी-जान से जुटा है; क्यॲकि उसकी प्रामाणिकता को कोरोना ने बड़ी चुनौती दी है। उसी तरह तमाम राजसत्ताएँ भी अपने दायित्व में सफल या विफल होने के बावजूद निरंतर सक्रिय हैं; क्यॲकि उन्हें भी अपनी वैधता और प्रयोजनीयता के तर्क को जीवित रखना है। ईश्वर को अपनी वैधता सिद्ध करने की ज़रूरत कभी नहीं पड़ी। दिलचस्प यह है कि हर संकट का मुक़ाबला करने में समर्थ होने की जो आश्वस्ति विज्ञान ने राज्य को दे रखी थी, वही मिथ्या सिध्द हुई। लेकिन यह आश्वस्ति धर्म सदैव देता रहा है। वह विज्ञान की उपलब्धि को भी अपने खाते में जोड़ लेता है और इसे लेकर आस्थावान दुनिया में कभी आपत्ति भी नहीं होती। अलबत्ता राज्य जब नागरिकॲ की सुरक्षा की अपनी ज़िम्मेदारियॲ को पूरा करने में नाकाम रहा तो

ईश्वर को उसने अपनी अक्षमता को ढकने और आलोचनाओं से बचाव के लिए ढाल के रूप में इस्तेमाल किया। महामारी का क़हर उसके लिए दैवी कृत्य (एक्ट ऑफ़ गॉड) बन गया। राज्य ने इस तरह स्वयं को दैवी आपदा के शिकार के रूप में रणनीतिपूर्वक पेश किया है। इसकी आड़ में वह आसानी से और चतुराई के साथ नागरिक के निजी जीवन में हस्तक्षेप भी कर सकता है।

कोरोना एक नैसर्गिक आपदा है लेकिन यह ऐसी आकस्मिकता के साथ अवतरित हुई है कि उसके प्रबंधन का कोई पूर्वानुभव उच्च तकनीकी से लैस उन्नत राष्ट्रअॅ के पास भी नहीं था। तैयारी तो दूर की बात थी। इसलिए तमाम राजसत्ताएँ एकबारगी हिल उठीं। लेकिन ईश्वर की सत्ता अडिग रही। यह जानते हुए भी कि कोई रास्ता फ़िलहाल दीख नहीं रहा, प्रार्थनाएँ थम नहीं गयीं, भले ही वृथा सिद्ध हुई हअॅ।

तर्कवादी तंज कसते रह गए कि महामारी से विज्ञान बचाएगा, ईश्वर नहीं। मगर ईश्वर की सत्ता पर इससे आँच न आयी। तर्क तो शून्य में बिला गए। दरअसल कोरोना का मुक़ाबला सिर्फ़ तर्क से नहीं किया जा रहा, मनमानेपन और अतार्किकता को भी तर्क की तरह इस्तेमाल किया गया। अमेरिका और ब्राज़ील के सत्ता-प्रमुखअॅ ने कोरोना को लेकर दिए गए शुरुआती बयानअॅ को इस संदर्भ में याद किया जा सकता है। उनके बयानअॅ और ईश्वर के भरोसे इस लड़ाई को लड़ने में क्या कोई अंतर है?

ईश्वर वैक्सीन नहीं बनाता लेकिन श्रद्धालुओं का विश्वास है कि वह ईश्वर की कृपा के बिना बन नहीं सकता। मगर अब भी तालाबंदी के दौरान घरअॅ या तालाबंदी खुलने के बाद पूजास्थलअॅ में की गयी असँख्य प्रार्थनाएँ और स्वस्ति कामनाएँ अधूरी-अफलित हैं। कोरोना के साथ प्रार्थना भी जारी है। ज़ाहिर है, कोरोना ने मनुष्य को चाहे जितना बदल दिया हो, उसकी आंतरिक प्रकृति अब भी नहीं बदल पाई है।

राज्य पसर रहा है, नागरिक सिकुड़ रहा है

कोरोना के समक्ष व्यक्ति यानी नागरिक और राज्यसत्ता दोनअॅ हैं। उनके आपसी संबंधअॅ की प्रकृति भले न बदली हो लेकिन उनके अंतर्विरोध तीव्र हुए हैं। इस दौर में राज्य आक्रामक तरीक़े से पसर रहा है, उसकी शक्ति का अप्रत्याशित और मनमाना विस्तार हो रहा है। लोकतांत्रिक सत्ताएँ इस बीच अधिनायकवाद की ओर कुछ अधिक झुकती नज़र आने लगी हैं। दूसरी और नागरिक कमज़ोर हो रहा है, सिकुड़ रहा है। राज्य के आधिपत्य के फैलाव के साथ नागरिक अब कोरोना के संक्रमण के चलते कुछ अधिक वेध्य हुआ है। राज्य अमूर्त्त है लेकिन नागरिक-चेतना में उसकी उपस्थिति प्रत्यक्ष है। कोरोना अदृश्य है लेकिन वह पृथ्वी के जीवमण्डल (बायो स्फ़ीयर) में अपनी प्रचंड उपस्थिति की धमक दे रहा है और विकट संक्रामकता के साथ आपदा के रूप में प्रकट हुआ है। नागरिक उसका शिकार है, हालाँकि नागरिक राज्य द्वारा संरक्षित है । आधुनिक समाज में नागरिक की सुरक्षा का दायित्व राज्य ने अपने कंधअॅ पर लिया है। इसलिए राज्य से नागरिक की अपेक्षा भी है कि वह बुद्धिमत्तापूर्वक आसन्न आपदा का मुकाबला करे।

दिलचस्प है कि राज्य भी तो कोरोना का शिकार है और स्वयं इतना वेध्य है कि उसके समूचे सामाजिक प्रबंधन और अर्थतंत्र को कोरोना ने लगभग तहस-नहस कर दिया है। इसलिए नागरिक और राज्य दोनअॅ उसका सामना उत्पीड़ित होने के मनोविज्ञान के साथ करने के लिए विवश हैं। लेकिन कोरोना के सामने बेबस राज्य नागरिक का आखेट करने में अपनी बेबसी को किसी हद तक छिपाने की कोशिश करता है। वह नागरिक की निजी गतिविधियअॅ पर भी नियंत्रण कायम कर लेता है। आज सारी दुनिया में निगरानी राज क़ायम है। अनायास नहीं कि कोरोना के फैलने के शुरुआती दौर में ही लगभग हर देश ने आरोग्य सेतु की तरह के सम्पर्क-खोजी ऐप तैयार कर उनका उपयोग अनिवार्य कर दिया था। यह राज्य का बल-प्रदर्शन नहीं तो और क्या है। राज्य जनता को भेड़अॅ की रेवड़ समझ कर मनमाने तरीक़े से हकालने लगे और अपेक्षा करे कि कोई चूँ तक न करे तो समझिये

लोकतंत्र और जन-आकांक्षा का दमन कर एक आज्ञाकारी प्रजा का निर्माण करने में वह सफल हो चुका है। ग़ौर करें कि कई देशॲ में इस अवधि में संसद की मंजूरी के बिना अपनी सुविधा के नए क़ानून लागू किये गए हैं। इस समय नागरिक जीवन में राज्य का हस्तक्षेप अधिकतम है और लोकतांत्रिक प्रतिरोध अगर समाप्त नहीं हुआ है तो कमज़ोर ज़रूर हो चुका है। कोरोना का प्रतिरोध करने में विफल राज्य नागरिक प्रतिरोध को नियंत्रित करने के बाद कोरोना पर नियंत्रण के झूठे दावे करता है। वह ताक़तवर, चाहे कोविड 19 की रहस्यमयी गुत्थी हो या बड़ी पूंजी की दैत्य सत्ता, के आगे असहाय, लेकिन कमज़ोर के लिये क़हर बनता जा रहा है। यह किसी एक देश में नहीं, लगभग सर्वत्र दिखाई देता है।